दी नेहु जर्नल, वर्ष : ५, संख्या : १ व २, २००७

गारो साहित्य का सांस्कृतिक परिदृश्य

डॉ. श्रुति पाण्डेय

गाओ, द्रोंगो[1], गारोजन की वाणी ।
गूँज उठें पर्वत और दर्रे
पक्षियों के राजा, दिखाओं गारोजन की छवि !
अन्य लोग मोहित हों इसके सौंदर्य पर,
गाओ, द्रोंगो, गारोजन की वाणी,
छवि गारोजन की, महिमा गारोजन की ।

सुप्रसिद्ध गारो कवि हावर्ड डेनिसन मोमिन की उपरोक्त उद्‌बोधन परक पंक्तियाँ गारो जनजाति के जागरण और विकास के मार्ग पर बढ़ने का संदेश देती हैं । पूर्वोत्तर भारत में निवास करने वाली अन्य जनजातियों के समान गारो जनजाति भी शेष भारत के लिये अल्पज्ञात रही है । गारो जन के जीवन-मूल्य, उनका रहन-सहन, आशाएँ-आकांक्षाएँ और सपने लोगों के लिये अपरिचित हैं । सदियों से विकास के पदचापों से दूर रहने के कारण इनकी जीवन-शैली और निश्छल आदिम सभ्यता से शेष भारत अनजान है । पूर्वोत्तर भारत में बसी हुई अन्य जनजातियों के समान गारो जनजाति भी अपने विशिष्ट जीवन-मूल्यों और लोक संवेदनाओं में रची-बसी जीवन शैली के कारण लोक जीवन का अनूठा रूप प्रस्तुत करती है ।

मेघालय राज्य के पश्चिमी क्षेत्र में स्थित गारो पहाड़ियाँ प्रकृति की मनोरम गोद में बसी हुई हैं । एक समय में यह पूरा इलाका घने जंगलों से आच्छादित था । आर्किड और पिचर प्लांट जैसी दुर्लभ वनस्पतियाँ और वन्य जीवन की दुर्लभ प्रजातियाँ यहाँ के वनों में पायी जाती थीं । परन्तु वनों की अनवरत कटाई और झूम खेती[2] के प्रचलन के कारण धीरे-धीरे यह सम्पूर्ण क्षेत्र उजड़ता सा जा रहा है । दरेंग, बुगी, मोहेस्खेली, दिदक, पिंजीरम, सिमसंग आदि इस क्षेत्र की प्रमुख नदियाँ हैं । गैर जनजातीय व्यक्ति सिमसंग को सोमेश्वरी कहते है । इन पहाड़ियों का पूरा परिदृश्य पहले हरे-भरे जंगलों, मनोहर झीलों, कलनाद करते झरनों और रंग-विरंगे फूलों से सजे चित्ताकर्षक दृश्यों से भरा हुआ था । परन्तु पर्यावरण में हो रहे निरन्तर ह्रास के कारण आज यहाँ प्रकृति अपने पूर्व वैभव से वंचित-सी हो गयी है ।

इस जनजाति के 'गारो' नाम के विषय में विभिन्न मत प्रचलित हैं । एक विचार के अनुसार गारो हिल्स के दक्षिण में 'गारा' या 'गान्चिंग' नामक जनजाति बसी हुई है, जो गारो जनजाति की शाखा है । संभवतः इस 'गारा' शब्द से निकले 'गारो' का प्रयोग धीरे-धीरे पूरी जनजाति के लिये होने लगा क्योंकि यह भू-भाग बांग्लादेश के मैमनसिंह जिले के पास स्थित है जिसका सबसे पहले अंग्रेजों से संपर्क हुआ । एक अन्य मत के अनुसार किसी प्राचीन गारो राजा अथवा मुखिया का नाम 'गारु' था जिसके कारण पूरी जनजाति को गारो कहा गया । एक पुराने लोकगीत में इस जनजाति

की मूल भूमि को गारु-अ-सौंग बताया गया है जिसका अर्थ है गारु की भूमि ।[३] गारो अपने को आःचिक (पर्वतीय व्यक्ति), मण्डे (आदमी) अथवा आःचिक मण्डे (पहाड़ का आदमी) कहते हैं ।

गारो जनजाति का सम्बन्ध भाषावैज्ञानिक और नृवैज्ञानिक दृष्टि से बोडो जनजाति से है । ऐतिहासिक दृष्टि से बोडो जनजाति ब्रह्मपुत्र घाटी के एक विस्तृत भू-भाग पर लम्बे समय तक निवास करती आयी थी । परवर्ती काल में संभवतः उत्तर भारत से होने वाले आक्रमणों के कारण उन्हें मैदान से पहाड़ों की ओर जाना पड़ा । नृवैज्ञानिक दृष्टि से बोडो जनजाति का सम्बन्ध तिब्बत-चीनी परिवार की एक शाखा तिब्बत-बर्मी परिवार से है । तिब्बत-चीनी परिवार का मूल निवास स्थान अनुमानतः उत्तर-पश्चिमी चीन में यांग-त्सी-क्यांग और ह्वांग-हो नदियों के बीच था । बोडो जनजाति इसकी तिब्बत-बर्मी उपशाखा से सम्बन्धित थी । इस परिवार की कई जनजातियाँ एक के बाद एक भिन्न-भिन्न समूहों में ब्रह्मपुत्र तथा छिंदविन, इरावदी और मीकांग जैसी कई बड़ी नदियों की घाटियों के बीच आकर बस गयी थीं ।

गारो जनजाति की वाचिक परम्परा में इस बात का उल्लेख है कि उनका मूल निवास स्थान तिब्बत में था ।[४] तिब्बत से गारो जनजाति के कई समूह जप्पा जलिम्पा और सुकपा बोंगेप्पा नामक मुखियों के नेतृत्व में कूचबिहार पहुँचे ।[५] लगभग चार सौ वर्षों तक कूचबिहार में निवास करने के बाद वे असम के धूबरी नामक स्थान पर आये । वहाँ के राजा ने गर्मजोशी से उनका स्वागत किया परन्तु कई कारणों से उन्हें वहाँ स्थायी रूप से बसने की अनुमति नहीं दी । तब वे जोगीगोपा से होते हुए ब्रह्मपुत्र को पार कर गुवाहाटी की ओर आये । गुवाहाटी के शासक द्वारा अनुकूल व्यवहार न मिलने पर वे असम में बोको (वर्तमान कामरूप) के पास बस गये । बाद में विविध प्रकार के संघर्षों से गुजरते हुए वे असम के गोआलपाड़ा जिले के हब्राघाट परगना में पहुँचे । उन्होंने हब्राघाट में गारो राज्य की स्थापना की जिसके मुखिया हब्रा अथवा अब्रा थे । इसी यात्रा के दौरान आपसी मतभेदों के कारण गारो जनजाति विविध शाखाओं में विभक्त हो गयी और कई समूह गारो पहाड़ियों की ओर चलकर वहीं बस गये ।

आरम्भिक सन्दर्भों से ज्ञात होता है कि गारो पहाड़ियों के आस-पास बसे हुए जमींदारों से गारो जन के लगातार संघर्ष होते रहे । इन जमींदारों द्वारा धन उगाही के कारण गारो जन रुष्ट थे । अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक आते-आते सीमावर्ती क्षेत्रों में बसे हुए गारो जन के साथ इन मुखियों के संघर्ष कुछ कम हुए । इसी बीच तत्कालीन बंगाल प्रान्त ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत आ गया और ब्रिटिश सरकार ने गारो पहाड़ियों में चल रही अशान्ति का समाधान करने के लिये रेंगटा नामक गारो व्यक्ति को कम्पनी के अन्तर्गत ज़मीदार बनाया, परन्तु इससे समस्या का हल नहीं निकल पाया।

सन् १८१६ ई. में ब्रिटिश सरकार ने डेविड स्कॉट नामक अधिकारी को इन संघर्षों का अन्त करने और गारो पहाड़ियों में शान्ति स्थापित करने के लिये भेजा । स्कॉट ने इस दिशा में कई प्रयास किये परन्तु इस क्षेत्र में पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं हो सकी ।[६]

सन् १८५२ और इसके पश्चात गोवालपाड़ा के इर्द-गिर्द और वर्तमान बांग्लादेश के कुछ हिस्सों में बसी हुई दूसरी जनजातियों से गारो जनजाति के संघर्ष होते रहे । सन् १८७२ में यहाँ की परिस्थितियों को देखते हुए ब्रिटिश सरकार ने पूरे गारो हिल्स पर अधिकार कर लिया । सन्

१८७६ में इनर लाइन रेगूलेशन पारित किया गया । इसके तहत गारो पहाड़ियों में बाहरी लोगों द्वारा लकड़ी काटने, पशुओं का शिकार करने और मोम, रबर, हाथी दाँत और वनोत्पादों का प्रयोग करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इस क्षेत्र में सोनाराम संगमा के नेतृत्व में गारो जन के अधिकारों के लिये संघर्ष चलता रहा ।

सन् १९१४ में गारो नेशनल कान्फ्रेन्स का गठन हुआ जिसका प्रमुख उद्देश्य था गारो जनता को शिक्षित करने के लिये प्रयास करना । इस समय गारो हिल्स में कोई संगठित राजनीतिक दल तो नहीं था परन्तु कुछ शिक्षित गारो जन राजनीतिक दल के गठन और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के विषय में चर्चा करते थे यद्यपि उनपर ब्रिटिश सरकार के साथ ही अमेरिकन बैप्टिस्ट मिशनरियों की भी कड़ी नजर रहती थी । सन् १९४२ में भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान फूकन संगमा ने गारो पहाड़ियों में विद्रोह की शुरुआत की और बन्दी हुए ।

सन् १९४६ में गारो नेशनल काउंसिल की स्थापना की गयी जो यहाँ का पहला राजनीतिक दल था । सन् १९४७ में स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही इस क्षेत्र का विलय भारतीय गणराज्य में हो गया ।

इन संदर्भों से ज्ञात होता है कि गारो जनजाति को आरम्भ से ही प्रतिकूल परिस्थितियों के बीच अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिये संघर्ष करना पड़ा । अपने मूल स्थान से प्रव्रजन करने के पश्चात् विषम परिस्थितियों में भी उन्होंने अपराजेय जिजीविषा का परिचय दिया । इस जनजाति का इतिहास आरम्भ से अबतक वीरता और संघर्ष से पूर्ण रहा है और कबीलाई लड़ाइयों तथा विकट समस्याओं का साहसपूर्वक सामना करते हुए उन्होंने अपने अस्तित्व की रक्षा की है ।

गारो जनजाति का सामाजिक जीवन, पूर्वोत्तर भारत की कई जनजातियों के समान शेष भारत से भिन्न है । इनकी सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत पाँच कुल हैं -- संगमा, मारक, मोमिन, आरेंग और शीरा । मेघालय की अन्य जनजातियों, खासी और जयन्तिया के समान गारो जनजाति में भी मातृसत्तात्मक व्यवस्था पाई जाती है जो इनकी सबसे विशिष्ट सामाजिक पहचान है । इस व्यवस्था के अन्तर्गत सम्पत्ति का अधिकार महिलाओं के पास होता है । सम्पत्ति का हस्तांतरण माता से पुत्री को होता है और मातृकुल के पास ही सम्पत्ति का अधिकार सुरक्षित रहता है । गारो जन में अपनी जनजातीय सामाजिक व्यवस्था के प्रति निष्ठा और आस्था का भाव रहता है । उनकी भाषा गारो है जिसकी कई बोलियाँ और उपबोलियाँ है । भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से गारो का सम्बन्ध तिब्बती-चीनी भाषा परिवार से है । प्रख्यात भाषाविद् सर जार्ज ग्रियर्सन ने गारो भाषा का उद्गम तिब्बती-चीनी भाषा परिवार के बोडो भाषा समूह के अन्तर्गत माना है ।[७] ब्रायन हॉजसन ने बोडो भाषा समूह के अन्तर्गत पूर्वोत्तर की कई भाषाओं जैसे बरा-कछारी, गारो, दिमासा, राभा, मेच, लातुंग, कोच, रियांग और त्रिपुरी को स्थान दिया है । एक समय में यह बोडो जनजाति पूरी ब्रह्मपुत्र घाटी में फैली हुई थी और त्रिपुरा से वर्तमान बांग्लादेश तक इसकी शाखाएँ प्रशाखाएँ थीं । इस क्षेत्र की वर्तमान जनसंख्या का प्रमुख आधार बोडो जनजाति और भाषा है । बोडो भाषा परिवार की भाषाएँ और बोलियाँ उत्तर में तिब्बत से लेकर दक्षिण में बर्मा तक बोली जाती हैं और तिब्बत - बर्मी भाषा परिवार के अन्तर्गत यह सबसे महत्वपूर्ण भाषा समूह है ।

बोडो भाषा समूह से निकली गारो भाषा, 'मण्डे कुसिक' अर्थात मनुष्यों की भाषा अथवा

'आःचिक कुसिक' अथवा पर्वतीय लोगों की भाषा कहलाती है । गारो जनजाति गारो पहाड़ियों के अलावा पूर्वोत्तर भारत के लगभग सभी भागों और बांग्लादेश में भी बसी हुई है। इन भिन्न क्षेत्रों में बसी हुई इन जनजाति के विविध समूह अलग-अलग बोलियों और उपबोलियों का प्रयोग करते थे जिसमें व्याकरणिक भिन्नताएँ भी विकसित होती गयीं । क्षेत्रीय सम्पर्क के अभाव के कारण भी इन बोलियों में भाषागत और सांस्कृतिक अन्तर विकसित हुआ । इन समूहों में आःवे, चिसक, दुआल, मात्ची, आःबेंग, चिबोक, रुंगा, गारा, आतोंग, मेःगम, मात्जांची आदि हैं । इन समूहों में पहले कबीलाई संघर्ष होते रहते थे परन्तु ब्रिटिश अधिकार तथा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत संचार माध्यमों के विकास और शिक्षा के प्रचार से इन संघर्षों में कमी आयी है।

भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से गारो एक योगात्मक भाषा है जिसमें शब्दों को धातुओं के योग से बनाया जाता है । उपसर्गों और प्रत्ययों को धातुओं के साथ जोड़ने से शब्दों के अर्थ में परिवर्तन आता है और वाक्य में शब्दों का अन्तर्सम्बन्ध स्पष्ट होता है । कुछ उपसर्गों और प्रत्ययों का प्रयोग स्वतंत्र शब्दों के रूप में भी होता है ।

गारो भाषा और संस्कृति की विरासत समृद्ध है और यह वाचिक परम्परा के रूप में ही हस्तांतरित होती आयी है । इस मौखिक परम्परा द्वारा प्राप्त कहावतों, लोककथाओं, लोकगीतों, प्रार्थनाओं, लोकोक्तियों आदि को लिखित रूप में संकलित नहीं किया जा सका है । गारो भाषा की विविध बोलियों का शब्द भण्डार भी समृद्ध है जिसे आज तक कोशबद्ध नहीं किया जा सका है । इसके लोकगीतों और लोककथाओं का भण्डार भी विशाल है । इसके अतिरिक्त तोलकचिया (पहेलियाँ) कत्ता मेआपा (लोकोक्तियाँ) कत्ता रोंगचू (पारंपरिक कथाएँ) माअंबि (पारंपरिक इतिहास) आदि मौखिक परम्परा द्वारा हस्तांतरित साहित्य है ।

'कत्ता अगना' गारो जनजाति की महाकाव्यात्मक लोकगाथा है जिसमें उस पौराणिक भूमि का वर्णन हैं जहाँ वीर पुरुषों और महिमामयी नारियों का निवास था, जहाँ लोग ज्ञानी और साहसी थे । इन गाथाओं में प्राचीन गारो नायको दिक्की और बंदी की वीरता का वर्णन मिलता है । उदाहरण के लिये एक प्राचीन वीर पुरुष बंदी का गौरव गान इस प्रकार किया गया है --

मेघगर्जन और बिजली के देवता गोएरा के समान है
कंठस्वर जिसका
प्रकाश के देवता सालगिरा के समान है चेहरा,
वास्तविक वीर नायक,
उषाकालीन सूर्य के किरणपुंज के समान,
अपने एकाकी वैभव में,
शोभित है वह पूर्ण गौरव के साथ ।[८]

वाचिक गारो काव्य के अन्तर्गत विविध अवसरों से सम्बन्धित विभिन्न लोकगीत हैं। जैसे झूम खेती के अलग-अलग चरणों से सम्बन्धित गीत, ''वंगाला'' अर्थात् शस्य-पर्व के समय होने वाले 'दानी-दोका' और 'अजेया' समारोहों के गीत, गृहप्रवेश के समय गाये जाने वाले गीत, शोकगीत आदि ।

झूम खेती की प्रक्रिया के हर चरण पर धार्मिक संस्कार होते हैं और गीत गाये जाते हैं ।

बाँसों को काटकर खेती के लिये जगह बनाने के साथ ही यह उत्सव आरंभ होता है और फसल को खलिहान में पहुँचाने के साथ समाप्ति पर पहुँचता है । इनमें से कुछ रस्में गाँव के पुरोहित द्वारा, कुछ ग्रामप्रधान अथवा 'नोक्मा' द्वारा और कुछ परिवार के मुखिया द्वारा सम्पन्न होती हैं । गृहप्रवेश तथा अन्य अवसरों पर भोज के समय मधुर गीतों के साथ आकर्षक नृत्य होता है ।

शरद्ऋतु में शस्य-पर्व 'वंगाला' का आयोजन होता है जो गारो जनजाति का सबसे प्रमुख उत्सव है । यह कृषि देवता 'मिसि सजोंग' को प्रसन्न करने के लिये आयोजित होता है ।[९] शस्यपर्व अर्थात 'हार्वेस्टिंग' - सभी जनजातियों का सर्वाधिक उल्लास का समय होता है । शस्य की कटाई के साथ ही लोग जीवन के कठिन संघर्षों को भूलकर आनन्द और उल्लास में डूब जाते हैं । वंगाला उत्सव के दौरान विभिन्न प्रकार के गीत गाये जाते हैं । उदाहरण के लिये 'दानी दोका' बुजुर्ग पुरुषों द्वारा गाया जाने वाला गीत है जिसमें युवा पुरुषों अथवा स्त्रियों की भागीदारी नहीं होती । इस अवसर पर बुजुर्ग नर्तक ग्राम प्रधान के घर से नृत्य आरंभ करते हैं । ढोलकों की थाप पर नृत्य करते हुए ये नर्तक उल्लास और उमंग के वातावरण में घर-घर में घूमते हैं । ये बुजुर्ग नर्तक बाँहों में बाँहें डाले (लाऊ) लौकी के पात्र से एक दूसरे के मुँह में चावल की मदिरा डालते हुए पूरे गाँव में नृत्य करते हैं ।

'अजेया' का संगीत वंगाला उत्सव का एक अनिवार्य अंग है । परम्परा के अनुसार इसमें युवक-युवतियाँ अनौपचारिक रूप से मिलते-जुलते हैं । कई बार विवाह के लिये जीवन साथी का चयन भी इसी गीत-संगीत के बीच होता है । निम्नलिखित अजेया गीत में युवती युवक से सुन्दर बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से संवाद करती है-

क्या तुम निरूद्देश्य भटकता हुआ तोता हो,
किस वृक्ष से तुम आये हो, प्रिय ?
क्या तुम लक्ष्यहीन नायक हो,
किस गाँव के हो तुम, प्रिय ?
क्या तुम मैदान से उड़कर आये मैना पक्षी हो, प्रिय ?
क्या तुम नोकमा के वंगाला के लिये आये हो, प्रिय ?
क्या तुम आये हो क्योंकि तुमने सुनी अफवाह, प्रिय ?
क्या तुम आये क्योंकि तुमने देखी छाया, प्रिय ?
क्या तुम मिमा[१०] धान की बालियाँ पहनकर आये हो, प्रिय ?
क्या तुम मछलियों से भरी बंसी लेकर आये हो, प्रिय ?
क्या तुम कडी[११] पहनकर आये हो, प्रिय ?
क्या तुम सिंगिमारि[१२] से मिलम[१३] लेकर आये हो प्रिय ?

गीत के दौरा गायक भिन्न-भिन्न प्रस्ताव रखते हैं । उदाहरण स्वरूप युवक कहता है--

आओ हम बनाएँ बालू की प्रतिमाएँ, प्रिये,
सिर पर पंख के समान कासी[१४] को पहने, आओ हम खेलें खेल, प्रिये,

अजेया में मुख्य स्वर उल्लासपूर्ण और हल्का-फुल्का होता है, क्योंकि यह गीत उत्सवों के दौरान मनोरंजन प्रदान करता है और युवावर्ग के मनोभावों को व्यक्त करता है ।

गारो भाषा का यह पारम्परिक साहित्य दूरस्थ गाँवों में आज भी मौखिक परम्परा की कड़ी के रूप में प्राप्त हैं । इस प्राचीन विरासत में मनुष्य और प्रकृति का निकट सम्बन्ध, गारो सामाजिक और धार्मिक विश्वासों का उदय, और समूची गारो जीवन पद्धति का ज्ञान मिलता है । इस साहित्य में प्रकृति के प्रति अनन्य प्रेम, पूर्वजों के प्रति आस्था ओर रस्मों-रिवाजों के प्रति निष्ठा व्यक्त हुई है। प्रकृति के प्रति इस एकात्म भाव को झूम खेती के इस वर्णन में देखा जा सकता है --

धान तैयार हैं खुशबूदार चिवड़ा बनाने के लिये,
मेजक[१५] में आ गये हैं पीले फूल,
एकत्रित हो गये हैं लोग आंगन में आग के गिर्द,
निर्धन लोग निकालते हैं पेड़ की छाल गद्दे बनाने को ।

पूर्वोत्तर भारत की अधिकांश जनजातीय भाषाओं के समान गारो भाषा के पास भी अपनी लिपि नहीं है क्योंकि मौखिक परम्परा द्वारा साहित्य के हस्तांतरण के कारण लिखित परम्परा का विकास हाल में ही हुआ है । गारो जनजाति के पारम्परिक विश्वास के अनुसार प्राचीन समय में उनके पास अपनी लिपि भी थी और लिखित साहित्य भी था जो पशुओं की खालों पर अंकित था। परन्तु जब वे अपने मूल स्थान तिब्बत को छोड़कर भारत की ओर प्रव्रजित होने लगे तो उनके पास पर्याप्त खाद्य सामग्री का अभाव हो गया और पशुओं की खालों को उबालकर भोजन के रूप में उनका प्रयोग किया गया । इस प्रकार गारो लिपि और साहित्य की लिखित परम्परा लुप्त हो गयी। गारो किंवदन्तियों के अनुसार प्राचीन समय के कुछ गारो वैद्यों ने जड़ी-बूटियों के वर्णन को लिपिबद्ध रूप में सुरक्षित रखा था । परन्तु आज यह वन्य-औषधीय साहित्य भी लुप्त हो चुका है । गारो भाषा पूर्वोत्तर की जनजातीय भाषाओं में से पहले पहल लिपिबद्ध की गयी भाषाओं में थी । यह काम ब्रिटिश अधिकारियों की देख-रेख में आरंभ हुआ था । लार्ड कार्नवालिस ने जब बंगाल में स्थायी बन्दोबस्त लागू करने की प्रक्रिया आरंभ की, तब उसने ढाका के कमिश्नर जॉन इलियट को बंगाल की सीमा के पास बसे गारो गाँवों का मुआयना करने के लिये भेजा । सन् १७८८-८९ में जॉन इलियट ने कई गारो गाँवों में जाकर गारो भाषा और जीवन-शैली का अध्ययन किया और गारो भाषा की संक्षिप्त शब्दावली का निर्माण भी किया जो गारो भाषा को लिपिबद्ध करने का पहला प्रयास था।

अठारहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में गारो भाषा को लिपिबद्ध किये जाने के इस पहले प्रयास के बाद लिखित गारो साहित्य का पहला चरण आरंभ हुआ जिसके अन्तर्गत शब्दों का संकलन, प्राइमरों और रीडर पुस्तकों का लेखन और बाइबिल का अनुवाद हुआ । जॉन इलियट द्वारा गारो शब्दों के संकलन के बाद सन् १८०० ई. में फ्रांसिस हैमिल्टन ने गारो शब्दों का संकलन किया । कलकत्ता के रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल द्वारा गारो - शब्दकोश का निर्माण किया गया । गारो शब्दावली को संकलित करने के कई प्रयास अंग्रेज अफसरों और मिशनरियों ने किये । सन् १८८७ में रेवरैण्ड रामके मोमिन ने बंगला-गारो शब्दकोश प्रकाशित किया । इस काल में गारो को लिखित रूप देने में रोमन और बंगला लिपि दोनों का प्रयोग किया गया । गारो जनजाति के शिक्षित समुदाय ने गारो साहित्य की लिखित परम्परा की आधारशिला रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । उन्होंने मौलिक रचनाओं के साथ ही अनुवाद कार्य में भी भाग लिया ।

अमेरिकी बैप्टिस्ट मिशनरियों के आगमन के साथ ही गारो लिखित साहित्य के विकास का

अगला चरण आरम्भ हुआ । मिशनरियों ने गारो समुदाय के साथ एकमेक होकर उनकी भाषा को आत्मसात करने का प्रयत्न किया । उन्होंने गारो पाठ्य पुस्तकों और धार्मिक साहित्य की रचना का समूचा दायित्व ले लिया । सन् १८६८ ई. में माइल्स ब्रोन्सन ने ''ब्रीफ आउट लाइन ऑफ ग्रामर'' लिखा और पहले गारो प्राइमर की रचना की। विलियम रॉबिन्सन ने पहले गारो व्याकरण की रचना की । डॉ. स्टॉडार्ड और रेवरैण्ड टी. जे. कीथ ने व्याकरण और प्राइमर पुस्तकों की रचना की । सन् १८७९ में मिशनरियों के प्रयास से ''आःचिक रिपेंग'' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ ।

ब्रिटिश सरकार ने इस क्षेत्र में शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दिशा में कदम उठाये और पुस्तकों के लेखन और प्रकाशन के लिये अनुदान दिये । इसी बीच सन् १८९३ ई. में पारित प्रस्ताव के अनुसार रोमन लिपि को गारो भाषा की लिपि के रूप में स्वीकार किया गया । सन् १९०२ में बंगला के स्थान पर गारो को शिक्षण के माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया । पूर्वोत्तर की लगभग सभी जनजातीय भाषाओं पर बंगला भाषा और लिपि का व्यापक प्रभाव मिशनरियों के आगमन के बाद धीरे-धीरे कम होने लगा ।

यह काल लिखित गारो साहित्य के विकास का शैशव-काल था । इस काल में रचे गये साहित्य का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि जनसामान्य के लिये पाठ्यपुस्तकों और धार्मिक विषयों के अतिरिक्त अन्य विषयों पर साहित्य रचना नहीं के बराबर हुई । परन्तु सन् १९२४ के आसपास धार्मिक साहित्य के स्थान पर 'सेक्यूलर' साहित्य को महत्व दिया जाने लगा । इसका कारण बदलता हुआ परिदृश्य था जिसे भाषा और लिपि के प्रश्न के समाधान से बल मिला ।

इस साहित्यिक विकास का पहला चरण नारायण माराक द्वारा सन् १९२५ में प्रकाशित ''ईजी मेथड ऑफ लर्निंग बेंगाली हिन्दी गारो'' से आरंभ होता है । जोबांग डी माराक ने सन् १९३० में प्रकाशित ''गारो हिस्ट्री'' नामक पुस्तक में गारो जनजाति के इतिहास की रूप-रेखा रखी जो पारम्परिक गारो कथाओं पर आधारित थी । जोबांग डी माराक और सिमिसन् आर. संगमा ने ''गारो फोक टेल्स-पार्ट ।'' भी प्रकाशित किया जिसमें २२ गारो लोककथाओं और संस्मरणों आदि को लिपिबद्ध किया गया । इस समय 'सेक्यूलर' साहित्य के साथ-साथ बाइबिल की कहानियों और अन्य धार्मिक साहित्य की रचना भी होती रही ।

सन् १९२४ से १९४० के बीच गारो साहित्य में आम गारो जनता ने सक्रिय रूप से रुचि लेना ओर योगदान करना आरंभ किया । इस काल तक आते-आते शिक्षित गारो जनमानस ने अपनी विरासत की खोज करनी शुरु की । इसी काल में रैवरैण्ड एम. सी. मेसन और ई. जी. फिलिप्स ने ''द फ्रेंड ऑफ द गारोज'' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया ।

गारो साहित्य के विकास का अगला चरण सन् १९४० से आरम्भ होता है । इस समय अनेक नये लेखक गारो साहित्य के परिदृश्य पर आये और साहित्य की विभिन्न विधाओं में रचनाएँ सामने आने लगीं । इसी काल में कविता, उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, जीवनी आदि का प्रकाशन होने लगा । गारो लेखकों ने इतिहास, विधि आदि विषयों पर भी लेखनी चलायी । सन् १९४० में पत्रकारिता के क्षेत्र में मील का पत्थर बनने वाली पत्रिका ''आःचिक कुरंग'' (गारोजन की आवाज) का प्रकाशन आरंभ हुआ । हावर्ड डेनिसन मोमिन, जिन्हें आधुनिक गारो साहित्य का पिता

कहा जाता है, इस पत्रिका के संपादक थे । पत्रिका के माध्यम से उन्होंने युवा वर्ग में नयी जागृति लाने का प्रयास किया। इस काल के अन्य महत्वपूर्ण लेखक थे देवान सिंग रोगमुथु, कन्डुरा मोमिन, सैमसन के. संगमा, विल्सन के. माराक, धारोनसिंग के. संगमा, रंगम जी. मोमिन, कर्णेश आर. माराक, हरेन्द्र माराक, डिंगमिन नेंगमिन्जा, मेकेन्सन रोंगमिति, दुद्धिन्द्र माराक, लेविसण्ड संगमा आदि । इस युग के प्रमुख नाटककारों में केनेथ मोमिन, अर्गिसन मोमिन, कर्णेश माराक आदि थे। उपन्यास के क्षेत्र में रेडिन मोमिन ने 'खालसिन आरो सोनात्वी' और सिमिसन संगमा ने 'सोनाबल मेचिक' नामक उपन्यास लिखे ।

सभी साहित्यिक विधाओं में गारो साहित्य का विकास होने पर भी साहित्यिक श्रेष्ठता की दृष्टि से काव्य के क्षेत्र में गारो भाषा का सर्वाधिक उन्नत रूप देखने को मिलता है । आज भी गारोजन काव्य को ही अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने की इच्छा रखते हैं । गारो काव्य के आरंभिक कवियों में रामके डब्लू. मोमिन का नाम सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । उनका काव्य युग के स्वर के अनुरूप उपदेश प्रधान है । इस काल के अन्य कवियों में मोधूनाथ मोमिन, तुनीराम माराक, कोसन जी. मोमिन, फीबी मोमिन, आदि है । इस काल का काव्य नीति प्रधान और उपदेशपरक है और उसमें जनशिक्षा का स्वर प्रमुख है ।

१९४० के आसपास गारो साहित्य के परिदृश्य पर उभरे कवियों में हावर्ड डी. मोमिन, इवलिन आर. मारक और जोनमोनी डी. शीरा प्रमुख हैं । इन कवियों के काव्य ने गारो काव्य के विषय क्षेत्र का विस्तार तो किया ही, साथ ही कलात्मक उत्कृष्टता की ऊँचाइयों का भी स्पर्श किया। ये युवा कवि अपनी सांस्कृतिक विरासत से भी परिचित थे और इस विरासत के प्रति अपने दायित्व का भी उन्हें ज्ञान था । इसलिए उन्होंने अपनी रचनाओं को सामाजिक जागरण का माध्यम बनाया । अपनी मातृभूमि के प्रति स्नेह की अभिव्यक्ति इन सभी कवियों ने की है । हावर्ड डेनिसन मोमिन अपनी जन्मभूमि के पिछड़ेपन से अत्यधिक निराश हैं । वे गारो जनमानस को उद्‌बोधित करना चाहते हैं जो आज भी द्ररिद्रता और अज्ञान से आक्रान्त है । अपनी जन्मभूमि के प्रति वे सर्वस्व समर्पित कर देना चाहते हैं । 'असोंगतांगना ओंकाङ्गनी' (जन्मभूमि के प्रति समर्पण) कविता में वे कहते हैं --

वचन देता हूँ मैं तुम्हें -- निःशेष होकर
उडेंल दूँगा मैं अपने प्रेम की डलिया तुमपर,
ओ मेरी जन्मभूमि,
बिना पूछे कारण -- चाहे माँगा जाय जितना
मैं सबसे अनमोल वस्तु को रखता हूँ तुम्हारी वेदी पर,
और अन्त में यदि माँग करो तुम,
मैं बेहिचक हो जाऊँगा बलिदान तुम्हारी वेदी पर

इवलिन माराक ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'ओ गारो लैण्ड' (ओ गारो भूमि) में गारो पहाड़ियों पर अंग्रेजी आधिपत्य पर चिन्ता व्यक्त करते हुए विदेशी शासन को उखाड़ फेंकने का आह्‌वान किया है --

ओ गारो भूमि, ओ गारो भूमि

न बहाओ आँसू हमारे लिये,
आये मृत्यु - फिर भी जीवित रहेंगे हम -
और योद्धा उत्पन्न होंगे कुल में
हो जाओ तुम अमर !

अपने समकालीन जीवन के सुख-दुख ने गारो कवि के संवेदनशील मन को उद्वेलित किया है । द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका से मर्माहत कवि ने लिखा --

क्या ये जगमगाते हुए नगर
समाप्त हो जायेंगे लपटों में ?
यद्यपि कलुषित किया जाना पृथ्वी का,
धुल गया आँसुओं में,
क्या अन्त नहीं है इसका ?
क्या धोती हो तुम अपना चेहरा,
अपने बच्चों के रक्त से, ओ पृथ्वी ?
क्या धुल सकता है,
धरती में समाया हुआ पाप का दाग ?
(बिलसी गितलः हावर्ड डेनिसन मोमिन)

आधुनिक गारो कवि ने जीवन और मृत्यु के चिरन्तन रहस्य पर विचार किया है । इसकी रचनाओं में मानव जीवन काल के निरन्तर प्रवाह में एक बूँद के समान क्षणिक है--

एक वर्ष और,
उल्लास का,
विषाद का,
विलीन हो गया,
अनन्तता के सागर में,
क्या बह सकती है पहाड़ी जलधारा,
ऊर्ध्वगामी होकर ?
(बिलसी गितलः हावर्ड डेनिसन मोमिन)

कवि उन कारणों का विश्लेषण करता है जिससे मनुष्य संसार में वास्तविक सुख प्राप्त नहीं कर सकता । मनुष्य भौतिक वस्तुओं के पीछे भागता है, आकांक्षाओं की प्राप्ति में लगा रहता है और कभी संतुष्ट नहीं होता --

विश्राम नहीं, नहीं है संतोष,
मनुष्य का कठोर श्रम पल भर में हो जाता है विलीन,
(मक्सजुमांग आःगिल्साक : जोनमोनी शीरा)

जोनमोनी शीरा ने गारो समाज में नारी की स्थिति की समीक्षा की है । मातृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था के बावजूद परम्परा और धर्म द्वारा प्रदत्त मूल्यों और रीति-रिवाजों के कारण

समाज में नारी की स्थिति विडम्बनापूर्ण है । 'आङ्आ मेःचिक' शीर्षक कविता में कवयित्री ने नारी की इस त्रासद नियति को इस प्रकार व्यक्त किया है --

जन्मी हूँ मैं नारी बनकर,
झेलने सभी तरह के कष्टों को,
हालाँकि रोती हूँ मैं अपनी किस्मत को,
नहीं बदल सकती उसे मैं

X X X X

नहीं कर सकती मैं अपनी इच्छा से कुछ भी,
नहीं है एक दिन का भी सुख मेंरे लिये ।

गारो पहाड़ियों के अप्रतिम प्राकृतिक वैभव ने गारो कवि के लिये रागात्मक प्रेरणा प्रदान की है । प्रकृति की मनोरम गोद में पले इन कवियों ने यहाँ के अनछुए अनोखे सौंदर्य का चित्ताकर्षक वर्णन किया है । हावर्ड डेनिसन मोमिन ने गारो पहाड़ियों में वर्षा के आगमन का मनोहर चित्र इस प्रकार अंकित किया है --

बहता है शीतल पवन
नानगेरा[१६] से
लाते हुए वर्षा की बूँदें,
ब्रह्मपुत्र और समुद्र से ।
सालजौंग[१७] देवता के खेत पर,
शकरकंद और तःमत्वी[१८] पर
कृपा है वर्षा की ।

इस प्रकार वाचिक परम्परा से लेकर वर्तमान काल तक गारो साहित्य विकास की एक सम्पूर्ण प्रक्रिया को पार कर चुका है । वाचिक परम्परा में जहाँ प्राचीन गारो जीवन पद्धति की विविध छटाओं के दर्शन होते हैं, वहीं लिखित साहित्य की शुरुआत के साथ ही पुनर्जागरण की चेतना का स्वर देखने को मिलता है । विकास के इस जागरणकालीन दौर में ईसाई मिशनरियों ने गारो भाषा और साहित्य की आधारशिला रखी और उसका निर्माण करने में विशिष्ट भूमिका निभाई । बाद के साहित्यकारों ने गारो साहित्य को विस्तार दिया और उसे कलात्मक सौष्ठव प्रदान किया । आधुनिक युग में हावर्ड डेनिसन मोमिन जैसे प्रतिभाशाली कवि हुए जिन्होंने गारो जनमानस के यथार्थ को मानवीय संवेदना के साथ व्यक्त किया । उनके परवर्ती साहित्यकारों ने गारो साहित्य को उत्तरोत्तर विस्तार दिया है । आनेवाले समय में इस सरल संवेदना से पूर्ण जनजातीय साहित्य को समुचित पहचान मिले, इसकी आशा की जा सकती है ।

संदर्भ और टिप्पणियाँ :

१. गारो पहाड़ियों में पाया जाने वाला पक्षी

२. झूम खेती अथवा 'शिफ्टिंग कल्टिवेशन' कृषि की एक आदिम पद्धति है जिसमें एक निश्चित भू-भाग को कृषि योग्य बनाने के लिये साफ किया जाता है । एक-दो वर्ष खेती के पश्चात उसे छोड़कर किसी अन्य भू-भाग पर खेती की जाती है ।

३. दि गारोज : मेजर ए. प्लेफेयर, स्पेक्ट्रम पब्लिकेशन, हेम बरूआ रोड, पान बाजार, गुवाहाटी - ७८१००१ द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ - ७

४. हिस्ट्री ऑफ गारो लिटरेचर, मिल्टन संगमा, नार्थ ईस्टर्न हिल यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, शिलांग, पृष्ठ - १

५. दि गारोज : मेजर ए प्लेफेयर, पृष्ठ - ८-९

६. हिस्ट्री ऑफ गारो लिटरेचर, मिल्टन संगमा, पृष्ठ - २

७. लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, वाल्यूम III , सर ए. ग्रियर्सन, मोतीलाल बनारसीदास, बंग्लो रोड, जवाहरनगर, दिल्ली - ७, प्रथम संस्करण १९०८, पृष्ठ - १

८. हिस्ट्री ऑफ गारो लिटरेचर, मिल्टन संगमा, पृष्ठ - १४

९. एनसाइक्लोपीडिया ऑफ नार्थ - ईस्ट इंडिया - वाल्यूम ४, मेघालय : एच. एम. बरेह, मित्तल पब्लिकेशन्स, न्यू देहली - ११००५९, पृष्ठ - ३४५

१०. गारो पहाड़ियों में पाया जाने वाला धान

११. गारो पुरुषों द्वारा सिर पर पहना जाने वाला आभूषण

१२. गारो पहाड़ियों के उत्तर-पश्चिम में स्थित गाँव, जहाँ जिले का पहला बाजार लगा था।

१३. गारो जन की दुधारी तलवार

१४. एक प्रकार का सरकण्डा

१५. एक प्रकार का पौधा जो सरसों के समान होता है

१६. गारो पहाड़ियों के पश्चिमी भाग में स्थित पहाड़ी का नाम

१७. फसल के देवता

१८. एक प्रकार का शकरकंद

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
शिलांग कालेज, शिलांग - ७९३००४